सियाचिन गतिरोध
The Siachen Impasse

श्रीनाथ राघवन
Srinath Raghavan
June 18, 2012

सियाचिन हिमनद (ग्लेशियर) पर भारत और पाकिस्तान के बीच वार्ता का हाल ही का दौर 12 जून को बिना किसी समझौते के खत्म हो गया. आज से अट्ठाईस साल पहले भारत ने हिमनद पर हावी रहने वाली सॉल्टरो नदी से संभावित विनाश को रोकने के लिए उस पर नियंत्रण बनाए रखने के उद्देश्य से *ऑपरेशन मेघदूत* शुरू किया था. सत्ताईस साल हो गए जब भारत के प्रधान मंत्री राजीव गाँधी और पाकिस्तान के राष्ट्रपति ज़िया उल हक सियाचिन विवाद पर रक्षा सचिवों के स्तर पर वार्ता शुरू करने पर सहमत हुए थे. इन वर्षों में वार्ताओं के तेरह दौर हो चुके हैं और दोनों पक्ष अब तक भारी मात्रा में जानो-माल गँवा चुके हैं. और अब तक हिमनद के विसैन्यीकरण पर कोई भी करार नहीं हो पाया है.

यदि दोनों पक्षों के भारी हित दाँव पर लगे हों तो भी इस अकड़ का मतलब समझा जा सकता है. वास्तव में सियाचिन हिमनद पर दोनों पक्षों को कोई रणनीतिक लाभ नहीं है. हिमनद के नियंत्रण से संबंधित स्पष्ट रणनीतिक मूल्य को लेकर भारतीय पक्ष के सामने विसैन्यीकरण के विरोधियों ने अनेक स्पष्ट तर्क रखे हैं.

आरंभ में यह दावा किया जाता था कि हिमनद पर नियंत्रण बनाए रखना लद्दाख और लेह की रक्षा के लिए बहुत ज़रूरी है. इसके विपरीत तथ्य तो यह है कि पाकिस्तान के लिए सियाचिन से लद्दाख पर हमला करना आसान नहीं है. ऐसा हमला करना सैन्यतंत्र और ऑपरेशन दोनों ही दृष्टियों से पाकिस्तान के लिए दुःस्वप्न साबित हो सकता है. इसके अलावा, लद्दाख पर हमला करने के लिए पाकिस्तान के पास और भी अधिक उपयुक्त ठिकाने हैं. इस बात पर भी ज़ोर दिया जाता है कि हिमनद पर उपस्थिति से भारत गिलगित और बाल्टिस्तान पर भी "नज़र रख सकता है". इन हिस्सों में बढ़ती चीनी उपस्थिति के कारण तो खास तौर पर यह और भी ज़रूरी हो जाता है. लेकिन इस क्षेत्र को निगरानी टावर के रूप में बनाए रखना हिमनद की जलवायु की परिस्थितियों को देखते हुए उपयुक्त नहीं है. इन क्षेत्रों की गतिविधियों पर निगरानी रखने के लिए भारत के पास कहीं अधिक आधुनिक प्रौद्योगिकी है. अंततः यह माना जाता है कि यदि भारत हिमनद से वापस लौट आए तो पाकिस्तान बहुत आसानी से खाली चौकियों पर कब्ज़ा कर लेगा. वास्तव में भारत के कब्ज़े वाले इलाके पर पाकिस्तान द्वारा कब्ज़ा करने की क्षमता संदिग्ध है. यह सुनिश्चित करने के लिए कि विसैन्यीकरण करार का उल्लंघन नहीं हो रहा है, भारत के पास निगरानी और चौकसी रखने की पर्याप्त क्षमता है.

रणनीतिक उपयोगिता की कमी का बाहरी पक्ष वह लागत है जो भारत को हिमनद पर अपनी चौकी को बनाए रखने के लिए वहन करनी पड़ती है. अनुमान है कि हिमनद पर भारतीय सेना की उपस्थिति को बनाए रखने के लिए हर साल 1000-1200 करोड़ रुपए (अर्थात् $180-220 मिलियन डॉलर) की लागत आती है. इसमें यदि कठिन परिस्थितियों में वहाँ रहने और काम करने के मनोवैज्ञानिक दबाव को जोड़ दिया जाए तो हो सकता है कि भारतीय और पाकिस्तानी नेता आवधिक विसैन्यीकरण की माँग करने लगें.

सन् 2005 में हिमनद पर सैनिकों को संबोधित करते हुए प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने कहा था कि अब समय आ गया है कि सियाचिन को विवाद का मुद्दा बनाने के बजाय "शांति का प्रतीक" बना दिया जाए. अप्रैल, 2012 में हिमस्खलन के कारण 140 पाकिस्तानी सैनिक मारे गए थे, जिसके कारण सैन्य और नागरिक दोनों ही अधिकारियों ने ज़ोर दिया कि हिमनद के गतिरोध को समाप्त किया जाए. परंतु भारत के रक्षा मंत्री ए.के. ऐंथनी ने संसद में कहा कि, हमें वार्ताओं के अगले दौर से किसी "नाटकीय नतीज़े" की अपेक्षा नहीं करनी चाहिए, क्योंकि "यह मामला बहुत ही जटिल है".

इस विवाद की जटिलता को समझने के लिए हमें इसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को और इसके पीछे की संस्थागत गतिशीलता को समझना चाहिए.

कश्मीर की संघर्ष विराम रेखा को भारत और पाकिस्तान की सहमति से मानचित्र के ग्रिड-पॉइंट NJ9842 तक ही चिह्नित किया गया. परंतु सारांश-विवरण में यह वर्णित किया गया है कि संघर्ष विराम रेखा पिछली भौतिक स्थिति से खिसककर अब "हिमनद के उत्तरी छोर" तक पहुँच गई है. 1972 के संघर्ष विराम रेखा संबंधी करार में इस कमी को दोहराया गया है. मानचित्र में संघर्ष विराम रेखा को NJ9842 तक ही चिह्नित किया गया है, लेकिन सारांश-विवरण में इन हिमनदों का उल्लेख किया गया है. इसमें कहा गया है कि संघर्ष विराम रेखा "थांग (भारत को मिलाकर) से पूर्व की ओर हिंमनद को जोड़ती है". इसके अलावा 1949 और 1972 के करारों का वह अंश स्पष्ट भी नहीं था, जहाँ पर NJ9842 के आगे जाकर संघर्ष विराम रेखा गुज़रती है. इन दोनों ही मौकों पर यह उम्मीद की गई थी, भले ही यह उम्मीद गलत साबित हुई कि रणनीतिक उपयोगिता न होने के कारण दोनों पक्ष इस इलाके से अपने - आपको अलग रखेंगे.

1980 के दशक के मध्य में जब यह विवाद बढ़ गया तो उस समय NJ9842 के आगे गुज़रने वाली संघर्ष विराम रेखा के बारे में दोनों ही पक्षों की धारणाएँ बिल्कुल भिन्न हो गई थीं. भारत का कहना था कि यह रेखा चीन की सीमा के साथ लगने वाली साल्टरो पहाड़ी के साथ-साथ उत्तर दिशा की ओर से गुज़रनी चाहिए, जिसके कारण हिमनद सीधे ही संघर्ष विराम रेखा की भारतीय सीमा में पड़ेगा. पाकिस्तान का मानना था कि संघर्ष विराम रेखा काराकोरम दर्रे तक उत्तर-पूर्वी दिशा से गुज़रनी चाहिए, जिसके कारण हिमनद संघर्ष विराम रेखा की पाकिस्तानी सीमा में पड़ेगा.

इन दोनों विपरीत स्थितियों को देखते हुए दोनों ही देशों ने सूझ-बूझ के साथ यह तय किया कि दोनों देश हिमनद के विसैन्यीकरण पर ही अपना ध्यान केंद्रित रखेंगे. अब समस्या केवल यही है कि विसैन्यीकरण का स्वरूप कैसा हो. दोनों की स्थितियों में पहला मतभेद तो इसी बात को लेकर है कि विसैन्यीकृत क्षेत्र का भौगोलिक दायरा कितना होना चाहिए . दोनों पक्षों ने ही विसैन्यीकरण के दायरे के बारे में अपने-अपने भिन्न विचार रखे हैं. दूसरा मुद्दा, जो अधिक महत्वपूर्ण है, यह है कि सेनाओं की वापसी से पहले सैनिकों की मौजूदा तैनाती का अभिलेखन कैसे किया जाए या फिर सरकारी शब्दावली में वास्तविक भूमि-स्थिति रेखा क्या हो.1980 के दशक के उत्तरार्ध से लेकर भारत का आग्रह रहा है कि विसैन्यीकरण पर किसी भी प्रकार का करार करने से पहले ऐसा प्रमाणीकरण बहुत आवश्यक है. पाकिस्तान इसमें आनाकानी करता रहा है, क्योंकि उसे लगता है कि ऐसा करने से हिमनद पर भारत के कब्ज़े को कानूनी रूप मिल जाएगा जो उसके दावे को कमज़ोर कर देगा और इस प्रकार भारतीय "हमले" को पारितोषिक की तरह मान लिया जाएगा.

यहाँ अब हम भारत सरकार में चलने वाली संस्थागत गतिशीलता की बात करेंगे. वास्तविक भूमि-स्थिति रेखा को प्रमाणित करने के नई दिल्ली के आग्रह का मूलभूत कारण यही तथ्य है कि पाकिस्तान द्वारा धोखा दिए जाने पर भारतीय सेना का सुरक्षा-चक्र यही हो सकता है. 1988 और 1994 के बीच की वार्ताओं में भारतीय सेनाओं का आग्रह इसी बात पर रहा है कि किसी भी प्रकार के विसैन्यीकरण के करार में वास्तविक भूमि-स्थिति रेखा के अभिलेखन का मानचित्र भी शामिल होना चाहिए. सन् 1992 में पाकिस्तान ने सुझाया था कि करार के परिशिष्ट के रूप में संलग्न मानचित्र को एक ऐसे स्पष्ट उपबंध के साथ खुला रखा जाना चाहिए ताकि संघर्ष विराम रेखा के बारे में भारत के दावे को मान्यता न मिल पाए.लेकिन भारत के सख्त रवैये को देखते हुए उसने अपना प्रस्ताव वापस ले लिया.

कारगिल युद्ध के बाद इस मामले में भारत का रुख और भी सख्त हो गया. अब तो भारतीय सेना का यह आग्रह भी है कि सियाचिन से वापसी से पूर्व न केवल मानचित्र में वास्तविक भूमि-स्थिति रेखा का प्रमाणीकरण होना चाहिए बल्कि उसे ज़मीन पर भी चिह्नित किया जाना चाहिए. ज़ाहिर है कि पाकिस्तान इस माँग पर विचार करने से हिचक रहा है.

भारतीय राजनैतिक नेतृत्व सेना की सलाह को ठुकराना नहीं चाहता. वस्तुतः सेना के लोग तो सरकार पर दबाव बनाने के लिए विरोधी दलों के साथ मिलकर इस बारे में जनता का सहयोग भी लेते रहे हैं. सेना प्रमुख जनरल जे.जे. सिंह ने अपने कार्यकाल में इस बारे में अपने विचार कई मौकों पर जनता के सामने रखे हैं. एक बार तो उन्होंने अपना बयान उस दिन दिया था जब *सियाचिन* पर रक्षा सचिवों की वार्ता शुरू होने जा रही थी. सेना ने इस बारे में मीडिया में अपनी स्थिति का खुलासा इसे लीक कराके भी किया था. हाल ही में *इंडिया टुडे में* सेना मुख्यालय के एक अधिकारी का यह बयान भी उद्धृत किया था कि " सियाचिन से इस हालात में सेना की वापसी का सवाल ही नहीं उठता " इस अधिकारी ने यहाँ तक कहा कि सेना प्रमुख, जिनके साथ सरकार के रिश्ते अच्छे नहीं चल रहे हैं, "राजनैतिक खेल की वेदी पर राष्ट्रीय हितों के साथ समझौता नहीं करेंगे."

सेना की राष्ट्रीय हितों की परिभाषा क्या है, इसे समझना बहुत जटिल है. जवाबदेही की श्रृंखला बहुत स्पष्ट हैः सेना की जवाबदेही राजनैतिक नेतृत्व के प्रति है और राजनीतिज्ञों की जवाबदेही जनता के प्रति है. यदि राजनीतिज्ञ सेना की सलाह की अवहेलना करते हैं तो राष्ट्रीय सुरक्षा खतरे में पड़ सकती है और फिर जनता ही यह तय कर सकती है कि मतदान द्वारा ऐसे राजनीतिज्ञों को सत्ता से बाहर कर दिया जाए. सेना को यह भी समझना होगा कि नागरिक प्रयासों के लिए की जाने वाली कार्रवाई के खिलाफ़ सलाह देने और उसका विरोध करने की रेखा में महीन-सा अंतर है. सियाचिन से सेना की वापसी के विरोध में बयान जारी करते हुए भारतीय सेना इस रेखा का उल्लंघन करने के बहुत ही करीब आ जाती है.

और वैसे भी सेना जोखिमों का केवल मूल्यांकन करने में ही सक्षम है. यह काम राजनीतिज्ञों का ही है कि वे इस पर अपना निर्णय दें और तय करें कि कब कौन-सा कदम उठाया जाना चाहिए. राजनैतिक नेतृत्व को ही इस पर विचार करना चाहिए कि चिह्नांकन की प्रक्रिया के बिना सेना की वापसी से जो खतरे दिखाई पड़ रहे हैं, उन्हें तोलते हुए यह भी देखना चाहिए कि पाकिस्तान के साथ संबंधों के सुधरने से क्या इससे कहीं अधिक लाभ नहीं होगा. ऐसे समय में जब भारत-पाकिस्तान के संबंधों में - खास तौर पर आर्थिक मोर्चे पर- सुधार हो रहा है, सियाचिन में विसैन्यीकरण पर करार होने से निश्चय ही आपसी विश्वास और अधिक बढ़ेगा और संबंधों में ठहराव आएगा. वास्तव में करार के लिए इससे अधिक बेहतर

कोई और समय नहीं हो सकता. भारत के राजनैतिक नेतृत्व को इस अवसर का लाभ उठाना चाहिए और काल्पनिक असुरक्षा बोध का बंदी नहीं होना चाहिए.

श्रीनाथ राघवन नई दिल्ली स्थित नीति संबंधी अनुसंधान केंद्र में सीनियर फ़ैलो हैं.

हिंदी अनुवादः विजय कुमार मल्होत्रा, पूर्व निदेशक (राजभाषा), रेल मंत्रालय, भारत सरकार
<malhotravk@hotmail.com>